ग्रन्थ संख्या १०६

# श्रीराधिकास्तोत्रम्

## श्रीपादप्रबोधानन्दसरस्वती विरचितम्

(सानुवादम्)

प्रकाशक :-

**कृष्णदास बाबा**

कुसुमसरोवर, राधाकुण्ड [मथुरा]

| प्रथमबार | न्यौछावर | संवत- |
|---|---|---|
| ५०० | २५ न०पैसे | २०२१ |

मुद्रक- गौरहरिप्रेस, कुसुमसरोवर, राधाकुण्ड (मथुरा)

# श्री राधिकास्तोत्रम्

❀ " श्री बृन्दारण्यविलासिन्यै नमः " ❀

—:❧❦❧:—

महाभाग्यपरीपाकलब्धराधापदस्पृहा ।
काचित्सद्भावप्रकृतिः स्तौति दीना निजेश्वरीम् ॥१॥
शृंगारसमाधुर्य्यसारसर्व्वस्वविग्रहे ।
नमो नमो जगद्वन्द्ये बृन्दावनमहेश्वरि ! ॥२॥
चारुचम्पकगौराङ्गि कुरङ्गीभङ्गिलोचने ? ।
कृपया देहि मे दास्यं प्रेमसाररसोदयम् ॥३॥
प्रसीद परमानन्दरसनिस्यन्दिसत्पदे ।
सकृत्कृपाकटाक्षेण पश्य मामतिकातरम् ॥४॥

---

महान् भाग्य राशि के परिपाक से श्रीराधा के चरण कमल की स्पृहाप्राप्त, उत्तम प्रकृति वाली, दीन कोई जन अपनी-ईश्वरी अर्थात् श्री वृषभानुनन्दिनी की स्तुति करती है। ग्रन्थकार श्रीप्रबोधानन्द सरस्वती-जी प्रकृति भावाविष्ट होकर इस प्रकार की स्त्रीलिंग वाची प्रयोगकरते हैं ॥१॥

हे शृंगाररस के माधुर्य सार-सर्व्वस्व विग्रहवाली, हे जगत वन्दनीयें, हे वृन्दावन की महेश्वरि! आपको नमस्कार नमस्कार॥२॥

हे मनोहर चम्पक पुष्प की भाँति गौर अंगवाली, हे हिरणी की भंगिमा की भाँति नेत्रवाली, आप कृपया मेरे लिये प्रेम- सार-रस के उदय करने वाला अपनी दास्यता को दीजिये । ३॥

हे परमानन्द रस क्षरन शील सुन्दरचरण कमलवाली श्री राधे आप एक बार ही कृपाकटाक्षपात के द्वारा अति कातर मुझे देखिये ॥४॥

कोटिकोटिजगद्भासिनखचन्द्रमणिच्छटे ।
आश्चर्य्यरूपलावण्ये सकृन्मे देहि दर्शनम् ॥५॥
महाप्रेमरसानन्दमदविह्वलताकृते ? ।
पुलकोद्भिन्नसर्वाङ्गि कदा त्वं परिलोक्यसे॥६॥
हा नाथ प्राणदयित क्वासि क्वासीति विह्वलाम् ।
अंकस्थेऽपि प्रिये राधे कदा त्वामवलोकये ॥७॥
सर्वज्ञोऽपि परेशोऽपि मुग्धमुग्धातिनीचवत् ।
चाटूनि कुरुते यस्याः सैव मे जीवितेश्वरी ॥८॥
यस्याः पदरसानन्तकोटचंशेनापि नो समाः ।
सर्वप्रेमानन्दरसा सैव त्वं स्वामिनी मम ॥९॥

---

हे श्रीराधे आपकी नखचन्द्र मणि की छटा से कोटि कोटि जगत भासमान हैं। आप के रूप-लावण्य आश्चर्य से आश्चर्य है, आप एक बार मुझे दर्शन दीजिये ॥५॥

हे महान् प्रेमरस आनन्द की मत्तता से विह्वल अंगवाली, हे पुलकों से पुलकायमान सर्वाङ्ग वाली तुम कब हमें देखोगी ॥६॥

अपने प्रिय श्रीकृष्ण के गोद में रहती हुई भी हे नाथ हे प्राणप्रिय तुम कहाँ हो कहाँ हो इस प्रकार बोलती हुई विह्वल हो जाती हो इस प्रकार आपका मैं कब अवलोकन करूँगा ॥७॥

परमतत्व के परमेश्वर सर्वज्ञ के सर्वज्ञ श्रीकृष्णचन्द भी मोहित होकर अति मुग्ध नीच की भाँति जिनका मनोहर आलाप करते हैं वह श्रीराधिका मेरे जीवन की ईश्वरी हैं ॥८॥

जिनके पद रस के अनन्त कोटि अंश के बराबर समस्त प्रेमानन्द रस समता को प्राप्त नही करता है वह आप मेरी स्वामिनी हो ॥९॥

हा राधे प्राणकोटिभ्योऽप्यतिप्रेष्ठपदाम्बुजे ।
तव सेवां विना नैव क्षणं जीवितुमुत्सहे ॥१०॥
सर्वलोकमहाश्चर्य्या सुकुमाराङ्गि ते कथा ।
त्वत्प्रसादादाप्तरूपा विनाप्ता भजनं मया ॥११॥
पतित्वा धरणीपृष्ठे गृहीत्वा दशनैस्तृणम् ।
तवैव चरणे दास्यं याचे वृन्दावनेश्वरि ? ॥१२॥
तवाश्चर्य्यरसामोदमत्तमत्ताकृतिं कदा ।
किशोरं श्याममालोके विभ्रमन्तं इतस्ततः ॥१३॥
कदा तव पदाम्भोजे निपतिष्णुं मुहु मुहुः ।
कृष्णभृंगमहं वीक्ष्ये त्वद्रसासवघूर्णितम् ॥१४॥

---

हे श्रीराधे कोटिप्राण से भी अत्यन्त प्रिय आपके चरण कमल की सेवा के विना क्षणकाल भी मैं जीवित रहने का सहन नहीं कर सकता हूँ॥ १० ॥

हे सुकुमार अंग वाली, केवल तुम्हारे प्रसाद से प्राप्त तुम्हारी कथा समस्त लोक में महान् आश्चर्य है जो भजन के विना ही हमसे प्राप्त अर्थात् भजन रूप होगई है ॥११॥

हे बृन्दावनेश्वरी मैं पृथ्वी पर पड़कर दाँतो से तृण धारणकर तुम्हारे चरण कमल की दासता को चाहता हूँ ॥१२॥

हे श्रीराधे ! आश्चर्य रसामोद से मत्त से मत्त आकार वाले तुम्हारे आस पास में भ्रमण करने वाले श्यामकिशोर का मैं कब अवलोकन करूँगा ॥ १३ ॥

हे श्रीराधे तुम्हारे चरण कमल में तुम्हारे रसासव से घूर्णायमान और बार बार पतित कृष्ण भ्रमर का कब अवलोकन करूँगा ॥१४॥

तत्र तत्रातिमत्तेन किशोरेण धृताञ्चलाम् ।
हुंकारगर्भदृग्भृंगीं कदा त्वामवलोकये ॥१५॥
भूयो भूयोऽनुनीताहं परमानन्दमूर्त्तिना ।
प्रसादं तव पश्यानि प्रपतता पदाम्बुजे ॥१६॥
कदा त्वां युक्तिचातुर्य्यैं र्लोकधर्मादिशंकिताम् ।
प्रबोध्य घटयिष्यामि महारसिकमौलिना ॥१७॥
कदा कान्तं परिष्वज्य सुप्तायाः कुञ्जमन्दिरे ।
तव संवाहयिष्यामि सुकुमारं पदाम्बुजम् ॥१८॥
कदा गृहीत्वा मद्धस्ताद् वरताम्बूलवीटिकाम् ।
प्रियास्यचंद्रे ददतीं स्वामिनि त्वां विलोकये ॥१९॥

---

हे श्रीराधे वहाँ वहाँ अतिमत्त किशोर कृष्णचन्द्र के द्वारा जिनके पटांचल धारण किया जाता है ऐसी हुंकार गर्भयुक्त नेत्र भंगिमा प्रकाशशील आपका मैं कब अवलोकन करूँगा ॥ १५ ॥

परमानन्द मूर्तिरुप उन श्रीकृष्ण के द्वारा बार बार अनुनीत मैं कब तुम्हारे चरण कमल में पड़कर तुम को प्रसन्न रूपसे अवलोकन करूँगा ॥ १६ ॥

हे श्रीराधे मैं कब लोक-धर्मादिक में शंका करने वाली आपको युक्ति चतुराई के द्वारा प्रबोधित कराकर महारसिक-शिरोमणि श्रीकृष्णचन्द्र के साथ मिलन कराऊँगा ॥ १७ ॥

हे श्रीराधे मैं कब कुंज मन्दिर में प्रिय श्रीकृष्ण के द्वारा आलिंगित होकर शयन करने वाली आपके सुकुमार चरण कमल का संबाहन करूँगा ॥ १८ ॥

कदा रतिकलावेशात् कर्षन्तं ते कुचाञ्चलम् ।
विलोक्य त्वत्प्रियं व्याजात् स्मित्वा यास्याम्यहं बहिः॥२०॥
कदा रसिकराजेण रम्यमाणां महाद्भुतम् ।
दृष्ट्वा दृष्ट्वा कुञ्जरन्ध्रै भवेयं रसविह्वलः ॥२१॥
महामधुरसत्प्रेमरससारमहोदये ।
अहो त्वन्मायया मूढास्त्वद्दास्ये नोन्मुखायनाः ॥२२॥
अहो त्वच्चरणाम्भोजमाधुरीमपि सत्तमाम् ।
सर्वज्ञा अपि अज्ञात्वा भ्राम्यंतेव बहिर्बहिः ॥२३॥

---

हे स्वामिनी श्रीराधे मेरे हाथ से मनोहर ताम्बुल बीटिका ग्रहण कर प्रिय के मुखचन्द्र में प्रदान करने वाली आपका मैं कब अवलोकन करूँगा ॥ १९ ॥

हे श्रीराधे रतिकला के आवेश से तुम्हारे कुचांचल का आकर्षण करने वाला तुम्हारे प्रिय श्रीकृष्ण का अवलोकन कर छल से मन्दहास्य करता हुआ मैं कब बाहर चला जाऊँगा ॥२० ॥

हे श्रीराधे कब मैं रसराज प्राणवल्लभ के साथ महान अद्भूत रमण-शील आपको कुँजरन्ध्रों में दर्शन करता हुआ करता हुआ रस विह्वल हो जाऊँगो (यहाँ पर लिंग विपरिणाम है) ॥ २१ ॥

महान् मधुर सत् प्रेमरस के साररूप महान् उदयशील है श्रीराधे! आपकी माया ( बहिरंगा )के द्वारा मोहित हो मूढ़ जन आपके दास्य में उन्मुख नहीं होते हैं ॥२२॥

हे श्रीराधे सर्वज्ञ जन भी उत्तम रूपसे तुम्हारे सत्तम चरण कमल की माधुर्य को न जानकर इधर उधर भ्रमण करते हैं ॥ २३ ॥

त्वत्सेवारीतिराश्चर्य्यलोकवेदविलक्षणा ।
तवैव कृपया लभ्या कदा सद्गुरुसंगतः ॥२४॥
त्वमेव स्वपदाम्भोजरसवर्त्मनि मे मतिम् ।
नितवंत्याशु कारुण्यात्पूर्णाशां न करिष्ये किम् ॥२५॥
कदा कृष्णोपभुक्तं त्वां समर्प्याहं प्रियेश्वरि ! ।
त्वदुच्छिष्टामृतं भुंक्त्वा कृतकृत्यंपदं लेभे ॥२६॥
कुंजतल्पसमासीनलोलकृष्णांगभूषणैः ।
कदा त्वां भूषयिष्यामि नवसंगभयत्रपाम् ॥२७॥
निजपादाम्बुजप्रेमरसज्योतिघनाकृतिम् ।
कुरु मां किंकरीं प्राणदयिते वार्षभानवि ? ॥२८॥

---

तुम्हारी सेवापरिपाटी अतिआश्चर्य एवं लोक वेद से विलक्षण है जोकि सद् गुरु संग से एक मात्र तुम्हारी कृपा से कभी प्राप्त होती है उस सेवा परिपाटी का मैं कब प्राप्त करूंगा ! ॥ २४ ॥

हे श्रीराधे आपने ही अत्यधिक करुणा बल से निज चरण कमल-रस मार्ग में मेरी मति को लगाया है अतः क्या मेरी आशा की पूर्ती नही करेंगी ॥ २५ ॥

हे श्रीराधे हे प्रियेश्वरी कब मैं श्रीकृष्ण के द्वारा उप-भुक्त वस्तु तुम को निवेदन कर तुम्हारे उस उच्छिष्ट अधरामृत का भोजन कर कृत्यकृत्य हो जाऊँगी ॥ २६ ॥

नवीन संग से भयभीत, लज्जापरायण आपको कुञ्ज शय्या में विराजमान चंचल श्रीकृष्ण के अंग भूषणों के द्वारा कब भूशित करूंगी । यहाँ विपरीत शृंगार का वर्णन है ॥ २७ ॥

हे प्राणप्रिये हे श्रीवृषभानुनन्दिनी मुझे निज चरण कमल के प्रेम रस ज्योति के निविड़ आकार रूप अपनी दासी बनाइये ॥ २८ ॥

प्रेमामृतरसानन्दमकरन्दौघवर्षिणि ! ।
कदा पदारविन्देऽहं विन्दे दास्यं तवेश्वरि ! ॥२६॥
भूत्वातिसुकुमारांगी किशोरी गोपकन्यका ।
कदाऽहं लालयिष्यामि मृदुलं ते पदाम्बुजम् ॥३०॥
कदा गोविन्दसन्देशवचनामृतधारया ।
पूरयिष्यामि ते कर्णकुहरं हृदयेश्वरि ! ॥३१॥
कदा तदाश्वासवाणीशीतलामृतसेवनैः ।
संजीव्य हरिमुत्तप्तं लेभे त्वत्कंठमालिकाम् ॥३२॥
कदा त्वां तत्सुहृद्वेषां कृत्वा संरक्षितां मया ।
द्रागुपेत्य हरिस्मेरः करे धृत्वाभिरुष्यते ॥३३॥

---

प्रेमामृत रसानन्द-मकरंद समूह के वर्षण कारिणी हे ईश्वरी राधे मैं कब आपके पदारविन्द में दास्यता को प्राप्त करूँगी ॥ २६ ॥

हे श्रीराधे, कब मैं सुकुमार अंग, किशोरी--अवस्था प्राप्त कर गोप-कन्यका रूप होकर तुम्हारे कोमल चरण का लालन करूंगी ॥ ३० ॥

हे हृदयेश्वरी राधे मैं कब श्रीगोबिन्द के संदेस रूप वचनामृत धारा से तुम्हारे कर्ण कूहर की पूर्ति करूंगी ॥ ३१ ॥

हे श्रीराधे में कब उस आस्वास वाणी रूप शीतल अमृत सेचन के द्वारा विरह से तपायमान श्रीहरि को जीवित कर तुम्हारी कंठमाला का प्राप्त करूँगी ॥ ३२ ॥

हे श्रीराधे कब हमारे द्वारा प्रिय सखा के बेश कारिणी एवं सरंक्षित आपके निकट मन्दहास्यवाले हरि शीघ्र उपस्थित होकर आपके हस्त कमल का धारण करेंगे उस से मैं उन पर क्रोध करूंगा ॥ ३३ ॥

कदा विहृत्य कान्तेन क्वचिदस्मत्परोक्षतः ।
तद्रूपितां समायातां हसन्तीं त्वां विचक्ष्महे ॥३४॥
मिथ्यैवागो विनिर्देश्यां त्वत्प्राणे व्रजनागरे ।
प्रेमान्धायाः कदा तेऽहं रसदां पनये रुषम् ॥३५॥
विदग्धसुन्दरीवृन्दवरचूड़ामणेः कदा ।
महारसनिधे राधे पदमाराधये तव ॥३६॥
हा राधे स्वामिनि व्रजकिशोरि दिव्यरूपिणि ! ।
प्रेमैकरसमग्नोऽहं भवेयं तव किंकरी ॥३७॥
वैष्णवानन्दकोटिर्वा व्रह्मानन्दादिकोटयः ।
मया तव नखज्योति कणाः निर्मञ्छनी कृताः ॥३८॥

---

हे श्रीराधे कब कहीं हमारे असाख्यात में प्राणवल्लभ के साथ विहार करती हुई आप रोष प्राप्त हो जाऊँगी एवंहमारे पास आवेंगी उस समय में हसती तुमको अवलोकन करूँगी ॥३४॥

हे श्रीराधे व्रजनागर प्राणवल्लभ के प्रति मिथ्या दोष लगाने वाली प्रेमान्ध तुम्हारी रसदायनि उस रोष को कब दूर कराऊँगी ॥ ३५

हे महारसनिधि स्वरूपणी श्रीराधे विदग्ध-व्रजसुन्दरी गण के उत्तम चूड़ामणिरूप आपके चरणकमल की आराधना कब करुँगी ॥ ३६ ॥

हे स्वामिनी हे श्रीराधे हे बृजकिशोरी हे दिव्यरुपिणी प्रेम रस मात्र से मग्न में कब तुम्हारी किंकरी हूँगी ॥ ३७ ॥

मैंने आपकी नख ज्योतिर्कणिका में कोटि कोटि वैष्णवानन्द अथवा व्रह्मानन्दादि कोटि कोटि नौछावर की है ॥ ३८ ॥

सर्वे धर्म्माः ममाधर्मा साधुसर्वमसाधु मे।
न यत्र लभ्यते राधे त्वत्पदाम्बुजमाधुरी ॥३९॥
कदा मदान्धगोविन्दसुतीक्ष्णनखरक्षतैः ।
मिथ्याव्यथानुकारीं त्वां हसिष्यामि मुदान्विता ॥४०॥
आश्चर्य्यरसमत्तेन महानागरमौलिना ।
संभुज्यमानां त्वां वीक्ष्य कदा स्यां पुलकान्विता ॥४१॥
तत्तत्सुरतवैचित्रीचतुरं त्वत्प्रियं कदा ।
तवाङ्के वीक्ष्य खेलन्तं पतेऽयं मूर्च्छिता भुवि ॥४२॥
किं करोमि क्व धावामि कस्य पादे लुठाम्यहम् ।
कथं वा लभ्यते राधे तव दास्यरसोत्सवम् ॥४३॥

---

हे श्री राधे जहाँ पर तुम्हारी चरण कमल माधुरी प्राप्त नहीं है, वहाँ समस्त धर्म मेरे लिये अधर्म एवं समस्त साधुता मेरे लिये असाधुता है ॥ ३९ ॥

हे राधे कब मदमत्त श्रीगोविंद के अति तीक्ष्ण नखक्षतों से झूँठमूँठ व्यथा का अनुकरणकरने वाली आपको देखकर आनन्द युक्त होकर मैं हसूँगी ॥ ४० ॥

आश्चर्य रस से उन्मत्त महानागर शिरोमणि श्रीकृष्ण के द्वारा संभुक्तमाना आपको देखकर मैं कब पुलकयुक्त हो जाऊँगी ॥ ४१ ॥

हे राधे उन उन सुरत वैचित्रियों में चतुर तुम्हारे प्रियको तुम्हारे गोद में क्रीड़ा करते हुये देखकर मैं कब मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर जाऊँगी ॥ ४२ ॥

हे श्रीराधे मैं क्या करूँगी, और भागकर कहाँ जाऊँगी किसके चरण में लुठायमान हूँगी और किस प्रकार तुम्हारे दास्य रस उत्सव मेरे लिये प्राप्त होगा ॥४३ ॥

वैकुण्ठादिपदं काम्यमपि तुच्छं मतं मम ।
न यत्र त्वामहं वीक्ष्ये वृन्दारण्यविलासिनि ! ॥४४॥
चुम्ब्यमानां श्लिष्यमानां पीयमानाधरां मुहुः ।
कदा त्वां वीक्ष्य कांतेन मग्नस्यां रससागरे ॥४५॥
गाढं त्वच्चरणाम्भोजबद्धप्रेमाहमीश्वरि ! ।
कदा रतिरसं सांद्रं सर्वमास्वादये तव ॥४६॥
श्रीराधे त्वत्पदाम्भोजपरागपरिरञ्जिते ! ।
वृन्दारण्ये रसमये देहि मे निश्चलां रतिम् ॥४७॥
यतंतः कृतिनो जज्ञतपःस्वाध्यायसंयमैः ।
अहं त्वच्चरणाम्भोजरेणोरेवाशया स्थितः ॥४८॥

---

हे श्रीराधे हे वृन्दावनविलासिनी जहाँ मैं आपको नहीं देखती हूँ वहाँ काम्य वैकुंठादि पद भी तुच्छ प्रतीत होता है॥ ४४ ॥

हे श्रीराधे प्राणवल्लभ श्रीकृष्ण तुम्हारे अधरविम्व पानके लिये चुम्वन एवं आलिंगन करेगें मैं उस अवस्था को देखकर कब रस सागर में मग्न हो जाऊँगी ॥ ४५ ॥

हे ईश्वरी श्रीराधे तुम्हारे चरण कमल में गाढ़ रूप से वद्ध प्रेम वाली मैं कब कोमल चित्त से समस्त रति रस का आस्वादन करूँगी ॥ ४६ ॥

हे श्रीराधे तुम्हारे चरण कमल पराग से परिरजित रसमय श्रीवृन्दावन में मेरे लिये निश्चल रति को दीजिये ॥ ४७ ॥

सुकृति वाले जन समूह यज्ञ, तपस्या,स्वाध्याय,संयमों के द्वारा तुम्हारी जाजन करते हैं करने दीजिये मैं केवल तुम्हारे चरण कमल रेणु की आशा करती हूँ ॥४८ ॥

न त्वं वैकुण्ठलोकेऽपि न वा ते रसदो प्रियः ।
वृन्दावनादृते तस्मात्तदेवाहं समाश्रितः ॥४९॥
सर्वानन्दमयाकारेष्वपि वृन्दावनप्रभोः ।
राधे त्वद्रसमत्तैव मूर्त्तिर्मे रोचते परम् ॥५०॥
नित्योन्मादरसप्रेमविलासमधुराकृतिम् ।
त्वद्दास्येन विनादृश्यं स्वप्रियं प्रेम्ना दर्शय ॥५१॥
पितृमातृसुहृद्बन्धुमुक्तानामप्यगोचरम् ।
कदा ते प्रियमाश्चर्य्यरसमूर्त्तिं विलोकये ॥५२॥
तत्तल्लोकचमत्कारी तत्तत्सुखमयाकृतिः ।
सर्वसाररसांगश्रीः कदा ते दृश्यते प्रियः ॥५३॥

---

वृन्दावन को छोड़कर तुम अन्यत्र कहीं नहीं हो न तुम्हारे प्रिय श्रीकृष्ण हैं। मेरे लिये वैकुन्ठलोक भी प्रिय नहीं है इसलिये मैं वृन्दावन में तुम्हारे आश्रय में पड़ी हूँ ॥ ४९ ॥

हे श्रीराधे वृन्दावन प्रभु कृष्णचन्द्र की सर्वानन्दमय नाना प्रकार मूर्तियां हैं परन्तु तुम्हारे रस से मत्त जो मूर्ति है वह मेरेलिये रुचिकर है ॥ ५० ॥

हे श्रीराधे नित्य उन्मद रस प्रेम विलास से युक्त मधुराकार, विना तुम्हारे दास्य से अदृश्य अपने प्रिय श्रीकृष्ण को प्रेम के द्वारा देखाओ ॥ ५१ ॥

पिता, माता, सुहृद्, बन्धु एवं मुक्तगण के भी अगोचर, आश्चर्य्य रस मूर्ति वाले, तुम्हारे प्रिय श्री हरि का मैं कब अवलोकन करूंगा? ॥ ५२ ॥

उन उन लोक में चमत्कारी, उन उन सुखमय आकार वाले, समस्त सार रस रूप अंग श्री वाले तुम्हारे प्रिय श्रीकृष्ण कब मुझे से दृश्य होगें ॥ ५३ ॥

वृन्दावननिकुञ्जेषु नित्यलीलाविनोदिनम् ।
त्वदेकनिरतं नित्यं कदा वीक्ष्ये प्रियं तव ॥५४॥
अनन्तानन्दरूपं ते प्रियं त्वन्मयजीवनम् ।
विकल्पितगतिं मूढैः सदाह द्रष्टुमुत्सहे ॥५५॥
यस्यानन्दरसांशांशमुपजीवति सर्वतः ।
तत्तदाकारलीलं तं दिदृक्षे त्वत्प्रियं रहः ॥५६॥
यद्यप्यानन्दसाम्राज्यं सर्वं लीलाकृतिष्वपि ।
तथापि लेशमात्रं तत् त्वद्वक्षोरूहभूषणे ॥५७॥
अयोग्येऽपि विमूढेऽपि मयि सर्वाधमेऽपि च ।
अनन्ताश्चर्य्यकरुणे नैवोपेक्षितुमर्हसि ॥५८॥

---

वृन्दावन के निकुंजों में नित्यलीलामहाविनाद परायण, एक मात्र तुममें निरंतर रत, तुम्हारे प्रिय को मैं कब अवलोकन करूंगा? ॥ ५४ ॥

अनन्त आनन्द स्वरूप त्वन्मय जीवन वाले, मूढ़ जनों से अप्राप्त गति वाले तुम्हारे प्रिय श्रीकृष्णचन्द्र का दर्शन के लिये मैं उत्कंठित हूं ॥ ५५ ॥

जिस आनन्द रस के अंशांश में समस्त उपजीवित होते हैं उस उस महा आकार लीला का धारण करने वाला तुम्हारे प्रिय श्रीकृष्ण का मैं इकान्त में कब दर्शन करूंगा ॥ ५६॥

यद्यपि समस्त लीलामय आकृति में आनन्द साम्राज्य मौजूद है तौ भी तुम्हारे वक्षोरूह के भूषण वाले श्रीहरि के तुलना में वह आनन्द साम्राज्य लेश मात्र है ॥ ५७ ॥

हे अनन्त आश्चर्य्य करुणामयि ? मैं अयोग्य, विमूढ़ एवं सर्वाधम हूँ, तो भी आप उपेक्षा नहीं कर सकती हैं ॥ ५८ ॥

लोकवेदपथं त्यक्त्वा तवैव चरणाम्बुजम् ।
गतोऽस्मि शरणं राधे न मां त्यक्तुमिहार्हसि ॥५९॥
अस्तु वा मा स्तु वा राधे कोटिजन्मान्तरेऽपि मे ।
त्वत्पादाम्बुरुहे दास्यमाशा त्वावश्यकी मम ॥६०॥
सर्वार्थसारसारैकनखचंद्रसुधा तव ।
कथं त्वच्चरणाम्भोजसेवाशां त्युक्तुमुत्सहे ॥६१॥
लौकिके वैदिके वापि विरुद्धाशक्तमानसम् ।
त्वत्पदैकरसे मत्तः किमप्यन्यं न पश्यति ॥६२॥
अनाथं पतितं मूढ़ं त्वदेकपदजीवनम् ।
कृपास्निग्धावलोकेन पश्य वृन्दावनेश्वरि ! ॥६३॥

---

हे श्रीराधे ? मैं समस्त लोक-वेद पथ का त्याग कर केवल तुम्हारे चरण कमल में शरण आया हूं, तुम मुझे त्याग नहीं कर सकती हो ॥ ५९ ॥

हे श्रीराधे! यद्यपि कोटि जन्मान्तर में आप के श्री चरण कमल में दास्यता है अथवा नहीं है तौ भी वह दास्यता वर्त्तमान में परम आवश्यक है ॥ ६० ॥

तुम्हारे नखचन्द की सुधा समस्त अर्थसार के एक मात्र सार रूप है। मैं किस प्रकार तुम्हारे चरण कमल की सेवा रूप आशा का त्याग कर सकता हूँ ॥ ६१ ॥

लोक में अथवा वेद में विरुद्ध आसक्त से मन फँस जाता है। एक मात्र तुम्हारे चरण रस में मत्त जन अन्य कुछ नहीं देखता है ॥ ६२ ॥

हे वृन्दावनेश्वरि! एक मात्र तुम्हारे चरण कमल को जीवन समझने वाला यह पतित, अनाथ, मूढ़ जन को करुणा-स्निग्ध अवलोकन के द्वारा देखिये ॥ ६३ ॥

स्वामिन्यतिरसाश्चर्य्यमूर्त्ते स्वस्य प्रियस्य च ।
रहः शुश्रूषणे योग्यं मम देहि परं वपुः ॥६४॥
ब्रह्मेशनारदादीनां यत्राशापि सुदुस्तरा ।
तव कैंकर्य्यपदवीं कामयन्तं धिगस्तु माम् ॥६५॥
राधे त्वद्दास्यपदवीं सर्वभक्तैश्च दुर्गमाम् ।
तत्रापि बत निर्लज्जो दुःप्रत्याशां करोम्यहम्॥६६॥
अत्यसंभाविते्ष्यर्थे दुराशा मे ययार्पिता ।
नमस्तस्यै नमस्तस्यै तस्यै तुभ्यं नमो नमः ॥
सर्वं मया दयातीते सर्वे साधकवैभवे ।
किमशक्यं तत्राप्यस्ति नमस्तुभ्यं नमो नमः ॥६८॥

---

हे स्वामिनि! हे अत्यन्त रसमय आश्चर्य्य मूर्त्ति वालि ? आप अपने एवं प्रिय श्रीहरि की रहः सेवा में योग्य श्रेष्ठ शरीर का प्रदान कीजिये ॥ ६४ ॥

जिस किंकरी पदवी में ब्रह्मा, शिव, नारदादियों की आशा अत्यन्त दुस्तर है अर्थात् वहाँ उनकी आशा नहीं पहुँचती है उन कैंकर्य्य पदवी को छोड़कर अन्यत्र कैंकर्य्य पदवी की कामना करने वाला क्या मुझे धिक्कार नहीं है ॥ ६५ ॥

हे आराधे तुम्हारी दास्य पदवी समस्त भक्तों के दुर्गम है तो भी निर्लज मैं इस प्रकार असम्भव प्रत्याशा कर रहा हूँ ॥६६॥

अत्यन्त असम्भावित इस अर्थ में जिन के द्वारा यह आशा समर्पित हुई है उन महापुरुष का नमस्कार नमस्कार एवं तुमको भी नमस्कार है ॥ ६७ ॥

हे दयातीते तुम्हारे लिये कुछ अशक्य नहीं है तुम्हारे लिये नमस्कार नमस्कार नमस्कार है ॥ ६८ ॥

यश्चानेनेश्वरीं राधां स्तवेन स्तौति भावतः ।
स तस्या उन्मदरसं प्रसादं लभतेऽचिरात् ॥६६॥
इतिश्रीप्रबोधसरस्वतीविरचितं
वृन्दारण्यविलासिनीश्रीराधिकास्तोत्रं समाप्तम् ।

---

जो जन इस स्तव के द्वारा ईश्वरी श्रीराधिका की स्तुती करता है वह उनके उन्मदरस–रुप प्रसाद का शीघ्र ही लाभ करेगा ॥ ६६॥

—::०:—

## श्रीराधाकृष्णाभ्यां नमः

श्रीगोबिन्दपदारविन्दमधुपानन्याभिलाषोज्झितान्
पूर्णप्रेमरसोत्सबोज्वलमनोबृत्तिप्रसन्नाननान् ।
शश्वत्कृष्णकथामहामृतपयोराशौ मुदा खेलतो
बन्दे भागबतानिमाननुलवं मूर्द्ध्ना निपत्य क्षितौ ॥१॥
पादाब्जे कृतसत्कृतावपि चतुर्वर्गे घृणां कुर्वतो
दृक्पातेऽपि गतव्यथान् ब्रजपतिप्रेमामृतास्वादकान् ।
मन्वानानतिदुस्तरं भवमहापाथोनिधिं गोष्पदम्
बन्दे० ॥२॥
मृग्यां ब्रह्मभवादिभिर्ब्रजबधूनाथांघ्रिकंजद्वयीं
स्वातन्त्र्यात्प्रणयोरुरज्जुभिरहो बद्धा बलान्निर्भरम् ।
स्वच्छन्दं पिवतः सदासवरसं प्रस्यन्दमानं मुदा
बन्दे० ॥३॥
बिश्वेषां हृदयोत्सबान्स्वसुखदान्मायामनुष्याकृतीन्
कृष्णेनाध्यवतारितान् जनसमुद्धाराय पृथ्वीतले ।

संसाराब्धिबहित्रपादकमलांस्त्रैलोक्यभाग्योदयान्
बंदे० ॥४॥
आलोकामृतदानतो भबमहाबन्धं नृणां छिन्दतः
स्पर्शात्पादसरोजशौचपयसां तापत्रयं भिन्दतः।
आलापाद् ब्रजनागरस्य पदयोः प्रेमाणमातन्वतो
बंदे० ॥५॥
भाबावेशसमुज्वलान् पुलकिनो हर्षाश्रुधाराबली-
निर्द्धौताननपंकजान्नबनवानन्दाद्भृश नृत्यतः।
प्रेमोच्चैश्चरितं सगद्गदपदं गोपी-पतेर्गायतो
बन्दे० ॥६॥
प्रेमास्वादपरायणान् हरिपदस्फुर्त्तिस्फुरन्मानसान्
नानन्दैकपयोनिधीन्रससमुल्लासिस्मितश्रीमुखान्।
धन्यान् सच्चरितौघनन्दितजनान्कारुण्यपूराशयान्
बन्दे० ॥७॥
कृष्णादन्यमजानतः क्षणमपि स्वप्नेऽपि बिश्वेश्वरे
तस्मिन्भक्तिमहैतुकीं बिदधतो हृत्कायवाग्भिः सदा।
श्रीलान् सद्गुणपुंजकेलिनिलयान्प्रेमाबतारानहं
बन्दे० ॥८॥
एतद्भागबताष्टकं पठति यः श्रद्धान्वितः क्षेमदं
भक्त्युद्रेकबिबर्द्धनं प्रतिपदं प्रेमप्रमोदप्रदम्।
प्रेमाणं परमं ध्रुबं स लभते बृन्दाबने सात्मसु
क्षिप्रं भागबतेषु येन बशगो गोपाङ्गनाबल्लभः॥९॥
इति श्रीमद्रसिकानन्दगोस्वामिना बिरचितं

श्रीमद्भागवताष्टकं
समाप्तम्

# श्रीगौरहरिप्रेस, कुसुमसरोवर, (राधाकुण्ड)

## से प्रकाशित पुस्तकें:—

| क० सं० | ग्रन्थ | प्रणयता | ग्रन्थ सं० |
|---|---|---|---|
| १ | विरुदावलीलक्षणम् | (श्रीपादरूपगोस्वामीकृत) | ११० |
| २ | (लघु) श्रीश्रीनारायणभट्टचरितामृतम् | | १११ |
| ३ | स्वकीयात्वनिराशविचार एवं परकीयात्वस्थापन | (श्रीपादविश्वनाथचक्रबर्तीकृत) | ११२, ११३ |
| ४ | श्रीश्रीमाधवेन्द्रपुरी एवं वल्लभाचार्य | | ११४ |
| ५ | श्रीमाधवदासजी की वाणी तथा आदर्शजीवनी | | ११५, ११६ |
| ६ | भक्तितत्वप्रकाशिका | (श्रीचैतन्यदासजीकृत) | ११७ |
| | गीतिविंशतिका | (श्रीगोस्वामीगोपीलालजीकृत) | ११८ |
| | भक्तिविवेक | (श्रीश्री नारायणभट्टजी कृत) | ११९ |
| | "अनर्पितचरीं चिरादिति" श्लोकस्य व्याख्या | (श्रीपाद्जीवगोस्वामी कृत) | १२० |
| ७ | आमोदमहाकाव्यम् | (श्रीअनूपनारायणभट्टाचार्यकृत) | १२१ |
| ८ | श्रीकृष्णकौतुकम | (श्रीश्रीपरमानन्दपादमहोदयकृत) | १२२ |
| ९ | श्रीगोपालतापनीउपनिषद्भाष्य | (श्रीपादप्रबोधानन्दसरस्वतीकृत) | १२४ |
| १० | श्रीभक्तभूषणसंदर्भः (सानुवादः) | (श्रीपादनारायणभट्ट कृत) | १२५ |
| ११ | श्रीराधिकास्तोत्र (सानुवाद) | (श्रीपादप्रबोधानन्दसरस्वतीकृत) | १२६ |

**यन्त्रस्थ ग्रन्थ—**

१–(सानुवाद) गोविन्दलीलमृत (श्रीकृष्णदासकविराजगोस्वामीकृत)

२–साधनदीपिका (श्रीपादनारायणभट्टकृत)

३–रासपञ्चाध्यायी (रसिकाह्लादिनी)"